आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की मानवतावादी–दृष्टि

डॉ. आर.पी. वर्मा,
एसो. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कारयित्री और भावयित्री प्रतिमा से सम्पन्न रचनाकार है। हिंदी के समसामयिक रचनाकारों और चिंतकों में उनका अप्रतिम स्थान रहा है। समकालीन मानव चेतना के समक्ष उनके जो महत्वपूर्ण स्वरूप उभरे, उनमें से उनका कौन रूप कम आकर्षक था यह कहना कठिन है। रचनाकार के रूप में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी उपन्यास, निबंध ओर कविता, सभी स्तरों पर जुड़े तो आचार्य रूप में मानवीय संस्कृति के व्याख्याता, इतिहास के अनुसंधाता और साहित्यगत शील और सौंदर्य के विशिष्ट रूप का उद्घाटन करने वालों में भी उन्होने अपनी साख पैदा की है। उन्होंने अपने पांडित्यपूर्ण चिंतन, वैदुष्यपूर्ण लेखन और वैदग्धपूर्ण भाषण से सभी को सर्वाधिक प्रभावित किया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की रचनाएं साहित्य के क्षेत्र में एक विशेष दृष्टि लेकर चलीं, जिसे मानवतावादी दृष्टि कहा गया है। कवीन्द्र रवीन्द्र के साहचर्य से उन्हें इस बात का ज्यों ही आभास हुआ कि मनुष्य को केवल जाति, सम्प्रदाय और देश काल जैसी संकुचित सीमाओं से ही ऊपर नहीं उठाना होगा, अपितु उसे उदात्त गुणों से भी जोड़ना आवश्यक होगा, जिसके बिना वह न व्यष्टि के स्तर परी और न समष्टि के स्तर पर ही महान हो सकता है। अपनी इस भावना को आचार्य द्विवेदी ने अपने उपन्यासों, अपने निबंधों और अपननी कविताओं में इतनी सहजता से आने दिया कि रचनाएं मोहक और सहज प्रभाव डालने वाली बन सकीं। आचार्य द्विवेदी अपनी रचनाओं के बीच उन्हें ऐसे रूप में संजोते, कि ऐसे कहीं नहीं लगता कि यह दृष्टि उन पात्रों पर आरोपित है। मानव के विकास में अवरोध डालने वाली बातों को वे न तो पंसद करते हैं और न अपनी रचनाओं में आने देते हैं। विचार और वितर्क नामक पुस्तक के एक निबंध में उन्होने स्पष्ट ही स्वीकार किया है कि हमारा परम लक्ष्य मनुष्यत्व है। मनुष्यत्व ही मनुष्य को (व्यक्ति मनुष्य को नहीं अपितु समष्टि मनुष्य को) आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक शोषण से मुक्त करने में समर्थ होगा। आचार्य द्विवेदी की दृष्टि से असली मानवीय संस्कृति, मनुष्य की समता और सामूहिक को विकासित करने में आज के मनुष्य को उदार और व्यापक भूमिका निभानी होगी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने साहित्य के माध्यम से जो कुछ भी दिया उसका दृष्टि में केवल एक प्रयोजन था–मनुष्य को संकीर्णता और मोह से ऊपर उठाकर उदार, विवेकी और सहानुभूतिपूर्ण बनाना।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का रचनाकार जहॉ एक ओर मानवता के विविध पक्षों को उद्घटित करने के लिए भौतिक वस्तु–सत्य से जुड़ता है, वहां उसकी दृष्टि मानव चित्त के भीतर तरल रूप में विद्यमान भाव–सम्पदा को नजरअन्दाज नहीं करती है। उनकी दृष्टि में वस्तु का सम्बन्ध यदि जीवन के यथार्थ की प्रथम इकाई है, जहॉ से मनुष्य की प्रज्ञा के लिए तर्कसंगत उपादान सुलभ होते हैं तो भाव सम्पदा का भी अनुभूति की चरम इकाई से सम्बन्ध जुड़ता है। वस्तु जीवन के लिए आवश्यक है, परन्तु

उसके साथ मानसिक औदार्य, बौद्धिक निर्लिप्तता और चित्त की आह्लादकता भी आवश्यकता है। इसीलिए आचार्य द्विवेदी यह स्पष्ट स्वीकार करते हैं कि भाव मूलतः मानवीय विश्वास के साथ जुड़ता है और विश्वास का सीधा सम्बन्ध मानवीय चित्त से है। उनके अनुसार विभिन्न युगों में साहित्यिक साधनाओं के मूल में कोई–न–कोई व्यापक मानवीय विश्वास होता है। आधुनिक युग का यह व्यापक विश्वास मानवतावाद है।.....नवीन मानवतावादी विश्वास की सबसे बड़ी बात है कि इसकी ऐहिक दृष्टि और मनुष्य के मूल्य और मर्यादा का बोध। यहॉ ऐहिक दृष्टि का तात्पर्य वस्तु दृष्टि लिया जाए और मानवतावादी विश्वास को मनुष्य चित्त की तरलता से जोड़ा जाए और इन दोनों के परिप्रेक्ष्य में आचार्य द्विवेदी के रचनात्मक साहित्य को देखने का श्रम किया जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि आचार्य द्विवेदी ने अपने उपन्यासों और निबंधों में रचना और अनुसंधान के स्तर से भाव तक की कुशल यात्रा की है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी नाना प्रकार के द्वन्द्व और संघर्षो से जूझते हुए मनुष्य को देखकर निराश नहीं होते। वे इस बात से तनिक भी कुंठित या अवसन्न नहीं होते कि मनुष्य प्रत्यन्त करने पर भी उच्चतर भाव भूमि पर नहीं पंहुच पा रहा है। वह युद्ध और लोभ, मोह में ग्रस्त है। इतिहास के परिप्रेक्ष्य में मनुष्य और मानवता को रखकर वे कहते है कि – ''मनुष्य थका है, पर रूका नहीं है। वह बढ़ता जा रहा है। इतिहास के अवशेष उसकी वियज यात्रा के पद चिन्ह हैं। इन पद चिन्हों में मानवता की छाप देखने का उनका आग्रह है।

रचनाकार का दायित्व असाधारण होता है। वह जो कुछ लिखता है उसके पीछे उसकी मानसिक तथा वैचारिक उथल–पुथल होती है, जिसका सम्बन्ध परम्परित मूल्यों और वर्तमान की प्रचलित धाराओं के बीच से रास्ता ढूंढने से होता है। रचनाकार ऐसे क्षणों में केवल इनमें से किसी एक दृष्टि को न चुनकर ऐसे बिन्दु का चुनाव करना चाहता है जो उसकी रचना को बहुप्रचलित और कम महत्वपूर्ण धारणाओं से अलग कर अप्रतिम महत्व के साथ सम्बन्ध कर सके। यह स्वाभाविक है कि ऐसी अभिव्यक्ति के लिए उसे चिर–परिचित साधनों के माध्यम से अपरिचित विचार और भावभूमियों में संचरण करना होता है, जिसके लिए वह मनुष्य के लिए शिव और सौंदर्य से युक्त साहित्य दे सकता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने रचनात्मक साहित्य में इसीलिए चिरपरिचित माध्यमों की सहायता से अपरिचित और अत्यन्त परिचित भूमियों तक पद संचार किया है। अतीत से सामग्री लेकर मनुष्य जाति की समसामयिक और अनागत समस्याओं को उभारकर व्यापक समाधानों का प्रत्यत्न करने में उन्होंने अतीत और वर्तमान के चिर–परिचित तथ्यों और वस्तुओं से सम्बद्ध धारणाओं का परिष्कार अपेक्षित अर्थो का ध्वनिवेश और नवीन सम्भावनाओं का समावेश किया है। यद्यपि बाणभट्ट, सातवाहन और गोपालदारक अतीत के ऐतिहासिक पात्र हैं उनकी स्थितियों का परिचय पुराने साहित्य में यंत्र–तंत्र उपलब्ध भी हो जाता है परन्तु द्विवेदीजी की रचनाओं में उन्हें जो रूप मिला है वह निश्चित ही उनके रचनाकार के द्वारा गढ़ा गया रूप है। जिसके माध्यम से उन्होंने अपने अपेक्षित उद्देश्य मानवतावादी चिन्तनधारा को समाने रखा है। आचार्य द्विवेदी यह भी स्वीकार किया है कि साहित्य प्रकाश का रूपान्तरण है। उन्होने अपनी रचनाओं के द्वारा ऐसे ही आलोक पुंज को समसामयिक और अनागत के पाठकों के लिए सुलभ कराने का प्रयास किया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की रचनात्मक कृतियों को देखने से ऐसा लगता है कि वे आवश्यक भावों और विचारों को रूपापित करने की दिशा में बढ़ते समय कल्पनाओं औ संभावनाओं के आकाश में उड़ान भरते हैं। ये उड़ाने इस तथ्य का प्रमाण हैं कि अशक्त या

अक्षम रचनाकार वैसी उड़ानों से सामान्यतः नहीं जुड़ सकता। उनके उपन्यासों और निबंधों में यह स्पष्ट देखा और परखा जा सकता है। ऐसे स्थानों पर रचनाकार के प्रयोजन के अनुकूल कल्पनाओं और संभावनाओं का विचित्र और विश्वसनीय स्वरूप देखने को मिलता है। 'बाण भट्ट की आत्मकथा' में बाणभट्ट और हर्ष आदि के अतिरिक्त सारे पात्र सारी कथावस्तु और सारी परिस्थितियां उनके कल्पनाशील मस्तिष्क की उपज है। 'चारूचन्द्रलेख' में लोकप्रचलित अनुश्रुतियों, किंवदन्तियों को ऐतिहासिक फलक के आधार पर रूपायित करने की चेष्टा आचार्य द्विवेदी जैसे समर्थ रचनाकार की सम्भावक प्रज्ञा का कार्य हो सकता है। 'पुनर्नवा' की ऊपरी ताना–बाना मुच्छकटिक से सूत्र अवश्य लेता है लेकिन बाकी सबका सब उनके उर्वर मस्तिष्क की कल्पना से सम्बद्ध है। 'अनामदास का पोथा' का संग्रथन भारतीय उपनिषद् विद्या से अपकृत होता हुआ भी कितनी दुस्सनेय ग्रन्थियों और वैचारिक मान्यताओं को समेटता हुआ आवश्यक आस्वाद की भावना को समाहित करता चलता है उसके पीछे उनकी महत्तर मेधा का पद संचार ही तो है और उनके ललित द्विवेदी का रचनात्मक साहित्य कल्पनाओं से संभावनाओं तक के अपेक्षित सहकार से विचित्र और आकर्षक रूप ले पाया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि में, साहित्य एक निश्चित उद्देश्य की ओर साहित्यकार की मानस यात्रा है और उसका लक्ष्य तक ले जाने का संकल्प, मनुष्य दुखों को अनुभव करा सकने वाली दृष्टि की प्रतिष्ठा और ऐसे दृढ़चेता आदर्श चरित्रों की सृष्टि जो दीर्घकाल तक मनुष्यता को मार्ग दिखाते रहें।

आचार्य द्विवेदी की धारणा के अनुसार साहित्य मनुष्य को सम्पूर्ण मनुष्य बनाने की दृष्टि का संकल्प लेकर चलने वाली वाड्मय विधा है, क्योंकि प्रत्यक्ष दृष्टि में मनुष्य से बढ़कर कुछ नहीं है। सारा जड़ और चेतन समुदाय मानव की विजय यात्रा का सहचर हो सकता है। मनुष्य में भौतिकता के साथ–साथ दिव्यत्व भी छिपा है। यदि भौतिकता की ओर मनुष्य का झुकाव हुआ तो वह अन्य चेतन प्राणियों से अपनी विशिष्ट अर्थवत्ता सिद्ध करने में असमर्थ हो जाएगा। अतः मनुष्य के भीतर छिपी हुई दिव्यता का अनुसंधान और उसे सहज भाषा में मानव तक पहुॅचाने का कार्य ही काव्य का सबसे बड़ा उद्देश्य है। मनुष्य में जो मनुष्यता है जो उसे पशु से अलग कर देती है, वही आराय है। यदि मनुष्य को संस्कृति के प्रशस्त राजमार्ग पर अग्रसर होना है तो उसे सौ बार सोच–विचार कर अपना सांस्कृतिक पथ निश्चित करना होगा। मनुष्य को अज्ञान, मोह, कुसंस्कार ओर परमुखापेक्षिता से बचाना ही साहित्य का वास्तविक लक्ष्य है। जो मनुष्य इनसे बचकर शुद्ध संस्कार, स्वतंत्रता विमल विवेक और समता के मार्ग पर आरूढ़ होता है, वहीं सुसंस्कृत कहलाता है।

आचार्य द्विवेदी ने अपने रचनात्मक साहित्य के द्वारा इस उद्देश्य को अधिक सजग रूप में निभाने का प्रत्यन किया है। कहने की पद्धति में विभिन्न कृतियों में अन्तर हो सकता है, परन्तु सामान्यतः कहीं भी उन्होंने अपने रचनाकार को इस सीमा के उल्लंघन का अवसर नहीं दिया है। यही कारण है कि वहां यदि इस स्तर के विपरीत कोई पात्र आया है तो वह केवल व्यंग्य और विनोद की दृष्टि से ही, जो द्विवेदी जी की मनोरंजक एवं विनोदप्रिय प्रकृति का परिचय देकर चुपचाप खिसक जाता है। अन्यथा प्रायः सम्पूर्ण रचनाएं गंभीर, संकीर्णता मुक्त, सत्व गुण से सम्पन्न और संवेदनशील दायित्व सें भरी हुई है।

निःसंदेह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का साहित्य मानवीय चिन्ता से ओतप्रोत है और मनुष्य को केन्द्र में रखकर चलता है, किन्तु मनुष्य का मानवत्व तो तभी सम्पूर्ण होता है जब वह आध्यात्मिक चेतना के स्तर पर भरा–पूरा हो सकें। मानव चरित्र को आचरण के स्तर पर

उठाने की बात विविध संस्कृतियों में बार–बार कही गई है, किन्तु आचरण सिद्धान्त के पीछे भी कुछ छिपा है। आचार्य द्विवेदी की अनुसांधनपरक दृष्टि इस ओर गए बिना नहीं रही है और उनका निष्कर्ष था कि जो आचरण चिन्मुख है वही श्रेष्ठ है। उनकी दृष्टि में जिन प्रयत्नों से मनुष्य का चिन्मय स्तर प्रभावित होता है। वह अधिक महत्वपूर्ण है। महत्वपूर्ण आचरण ऐसे ही महत्वपूर्ण प्रयत्नों का नाम है। अतः ऐसे आचरणों के प्रति मान समष्टि में आस्था को जागृत रखना साहित्य का प्रमुख कार्य है। यदि साहित्य इस प्रकार की आवश्यकता से नहीं जुड़ता है तो वह अपने उद्देश्य से वंचित हो जाता है। क्योंकि मनुष्य की सम्पूर्णता ही उसका मूल उछ्देश्य है तथा मनुष्य का समस्त आहार–विहार और समस्त मन प्रायः चिन्मुख होकर सार्थक होता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इतिहास से रस लेते हुए अपने साहित्य के माध्यम से कल्पनाओं और संभावनाओं के आधार पर जो कुछ दिया है उसमें मात्र किस्से, कहानियों अथवा मनढन्त विचार नहीं है, अपितु सत्वचित्त स्तर के उद्घाटन का सार्थक प्रयत्न है। उस स्तर को सामने लाने के लिए ही आचार्य द्विवेदी ने वास्तव में वाड्मय की दीर्घ और दुर्गम घाटियों में झांक जाने का कष्ट उठाया है। उनसे प्राप्त तथ्यों और अपेक्षित कल्पनाओं तथा संभावनाओं के सहयोग से जो कुछ वे समाने ला सके, उसका एक ही लक्ष्य है–मनुष्य, एक ही स्वर है–सम्पूर्ण मनुष्यता का उद्गीथ और एक ही परिणति है – मनुष्य में चिन्मयता का स्फुरण।

साहित्य की रचना में उसकी कलात्मक साधना का काफी महत्व होता है और यह महत्व बहुत कुछ उसमें निहित सौंदर्य से सम्बद्ध होता है। रचना में शिवत्व के साथ सौंदर्य का अपेक्षित सहकार आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी होता है। महत्तर उद्देश्य की अभिव्यक्ति यदि ललित होती है तो वह लक्ष्य की तरह मनोहारिणी होती है, क्योकि उसका एक कार्य सहृदय चित्त की अर्जकता भी है। उसके न होने पर रचना काय लक्ष्य पाठकों तक नहीं पहुॅच पाता है। इसी कारण विशिष्ट रचनाकार अपनी रचना में ऐसे ललित तत्वों का सहज रूप में विनिवेश करता है जो अनायास पाठक को आकृष्ट कर सके।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का साहित्य अपनी लालित्य योजना के कारण भी महत्वपूर्ण बन गया है। कालिदास की लालित्य योजना के रचनाकार और 'लालित्य तत्व' नामक शोध पत्र के लेखक आचार्य द्विवेदी को यह अच्छी तरह मालूम था कि रचना में अपेक्षित सौंदर्य दृष्टि केवल विचार, कल्पना और तथ्य के स्तर पर नहीं बल्कि पद और पदार्थ के विभिन्न स्तरों पर भी आवश्यक है। इसी कारण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी रचनाओं में मानवकृत कलाओं को मानव–सापेक्ष लालित्य के आधार पर रचने का प्रयास किया है। उनकी दृष्टि में मनुष्य को, मनुष्य की दृष्टि से समझने और बूझने से लेकर उसके द्वारा अन्वेषित सौंदर्य के प्रतिमानों का आधार भी अपेक्षित है, क्योकि शेष सृष्टि का केन्द्र स्वयं वही है। इसीलिए मानव की मंगल साधना सौंदर्यमय रचना के द्वारा सामने तो लायी जा सकती है, किन्तु स्वंय सौदर्य की प्रधानता देकर शिवत्व की गौणता उन्हें पसंद नहीं है। अपने लालित्य तत्व नामक शोधपत्र में उन्होने इसे स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का रचनाकार सहज वैचारिकता और सहज अनुभूति का रचनाकार है। वह बड़ी से बड़ी बात और गूढ से गूढ अनुभूति को सहज भाषा में आकार देने मे निपुण है। मानवीय संस्कृति के भावात्मक और वैचारिक पक्षों के उद्घाटन की ओर चलते समय जब वह विस्तार करता है तो पाठक शीघ्र ही उसके आगोश में आ जाता है, किन्तु जैसे–जैस रचनाकार आगे बढ़ता है तब पाठक अपने को एक ऐसी सहज वैचारिक और भावात्मक ऊॅचाई

पर पाता है। कि उसका भटकाव के प्रति पश्चाताप उसे सहज और महत्वपूर्ण अनुभूतिक सत्य से जोड़ देता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने संस्कृति का देश और काल की सीमाओं से ऊपर रखने क लिए कहा है कि जिसे हम संस्कृति कहते हैं वह सम्पूर्ण समष्टि मानव के कल्याण के लिए है, क्योंकि वह निर्मात्री शक्ति है। अतः बहुत सी चीजों को जो सड़ी–गली है, छोड़ती जाती है जो नए क्षेत्र में आती है उन्हें ग्रहण करती है। कवेल विचार संस्कृति ही संस्कृति नहीं है, विचारों को जिस रूप में हम प्रस्थापन करते है, बुद्धि ग्राह्य, इन्द्रिय गाह्य और मनोग्राह्य बनाते हैं वही संस्कृति है। अतः संस्कृति मनुष्य के चित्त के संस्कार का परिणाम है।

जो व्यक्ति अपने व्यवहार, आचरण, लेखन, भाषण, चिन्तन और मनन में सत्वगुण को स्थान देता है, जो अपने चारों ओर फैले जन समूहों को प्यार और ममता से देखता है, जो विश्व के सभी धर्मो और जातियों के मनुष्यों को आदर और समत्व देता है, वह संस्कृति और सभ्यता का आदर्श होता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने साहित्यकार के स्तर पर जिस रचनाधर्मिता को स्वीकार किया था वह भारतीय जनमानस के साथ एकात्म हो सकी थी। उन्होंने मनुष्य के सुख–दुख, द्वन्द्व संघर्ष, आवेग–संवेग, उत्थान–पतन, को उसकी विजय यात्रा के रूप में देखा और उसका ऐसा सटीक और सजीव वर्णन किया कि मनुष्य अपने को प्रत्यक्ष पहचान सकें। उनके समकालीन लेखकों में प्रेमचन्द्र को छोड़कर मनुष्य के इतने समीप और कोई नहीं पहुँच सका। राष्ट्रीय और सांस्कृतिक चेतना का स्वर छायावादी कवियों में भी था, और प्रसाद ने उसे अपेक्षाकृत ऊँचे स्वर में मुखरित भी किया था, किन्तु मानव की साहित्य में जैसी प्रतिष्ठा आचार्य द्विवेदी जी कर सके वैसी और कोई नहीं कर सका। आचार्य शुक्ल और आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने अपनी समीक्षाओं में सौंदर्य और सौष्ठव के साथ सांस्कृतिक मूल्यों की ओर इंगित किया, भारतीय संस्कृति के भास्वर बिन्दुओं को उभारा भी किन्तु मानव महिमा का उद्घोष वे भी नहीं कर सके। समकालीन लेखकों ने अपनी श्रेष्ठ रचनाओं से प्रशंसा अवश्य पाई, किन्तु सार्वजनिक हृदय का स्नेहपूर्ण आतिथ्य आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और प्रेमचन्द की ही प्राप्त हुआ।

प्रेमचन्द ने शोषित वर्ग की वेदना को वाणी का स्पन्दन दिया है तो द्विवेदी जी ने मनुष्य मात्र के महत्व उसके दीर्घकालीन संघर्ष एवं विजय यात्रा का उमंग और उल्लास की वाणी में वर्णन किया है। उनकी वाणी ताप तप्त धरती पर बरसने वाले सहज जलाधर के समान थी। वस्तुतः आचार्य द्विवेदी सच्चे साहित्य स्रष्टा थे, वे संस्कृति के प्रतीक और आख्याता थे। वे अत्यन्त सहज, सरल, निष्कपट, मंद, सुगंध मलय पवन के समान आनन्द और उमंग की तरंग में बहने वाले सुसंस्कृत महामानव थे। उन्होने भारतीय और मानव संस्कृति को युग–युग के लिए समृद्ध किया है।

संदर्भ

- हजारी प्रसाद द्विवेदी, विचार और वितर्क, पृ0 92–93
- हजारी प्रसाद द्विवेदी, साहित्य का मर्म, पृ0 153
- हजारी प्रसाद द्विवेदी, विचार और वितर्क, पृ0 90
- हजारी प्रसाद द्विवेदी, साहित्य सहचर, पृ0 20
- वही, पृ0 69
- हजारी प्रसाद द्विवेदी, सहज साधना, पृ0 101

- परिशोध (अंक–30), पृ0 46
- वही, पृ0 9
- वही, पृ0 10